"घुँघरु या अमृत"

"दिनस चढ़े फिर आथवै रैण सभाई जाई । आंव घटे नर न बूझे नित मूसा लाज टुकाई !" प्रभु प्रेरणा आत्मा के कल्याण हेतू स्पष्ट है कि जैसे दिन चढ़ता है फिर शाम हो जाती है उसी तरह फिर रात भी बीत ही जाती है । अर्थात जीव दिन भर अपने कार्यो को सिद्ध करने के लिये दौड़ता ही रहता है । शाम को थका मांदा घर लौटता है तो रात सोने में ही बीत जाती है । विचार करना है कि क्या "दुर्लभ मनुष्य जन्म" केवल इन कार्यो को

सिद्ध करने में ही व्यतीत करना श्रेयस्कर है ? जन्म से पहले तू कहाँ था ? दिन भर अर्थात पूरी आयु तू इन्हीं धन्धों को पूरा करने में ही व्यस्त रहा । अब फिर मर कर के तू कहाँ जायेगा ? तू असल में कौन है ! क्या केवल हाड़-मास का एक लोथड़ा मात्र ही तेरी हस्ती है ? इन सब सवालों को विचार कर तू उस ताकत के बारे में भी विचार कर जो निरन्तर जड़-चेतन में हर वक्त प्रत्यक्ष समायी हुई है भरपूर ! जो कुछ भी तू इस सृष्टि में देखता है वह केवल अपने आप ही प्रस्तुत नहीं हो जाता । कोई बहुत बड़ी ताकत अथवा समर्था बड़े "सूक्ष्म तथा गुप्त रूप से" इन सभी दुर्लभ कार्यों को बहुत सावधानी अथवा सफाई से ही केवल प्रत्यक्ष करती है । तेरी हस्ती भी केवल उसका एक छोटा सा अंश मात्र ही है । तेरे में और उस में कुछ भी फर्क कभी सुपने में भी नहीं है । यहाँ जो कुछ भी तू देखता है वो केवल एक नजर का धोखा मात्र ही है । तू अमृत का अंश अथवा कतरा अमृत के सिवा और कुछ भी नहीं है । तुझे सुख केवल अपने मूल अथवा अमृत के भण्डार में समाने के बाद ही निश्चित रूप से प्राप्त हो सकता है । इस अपने मूल रूपी अमृत को तू उस "नजर के धोखे" में तलाश कर रहा है । इसमें तुझे केवल "धोखा" ही निश्चित रूप से प्राप्त होना लिखित रूप में प्राप्त होगा । ऐसा तू यकीनी तौर पर जान ले । प्रभु प्रेरणा स्पष्ट लिख कर के ब्यान दे रही है कि "घर ही मह अमृत भरपूर है ।" अर्थात "घर यानी के शरीर" में ही यह तेरा मूल

रूपी अमृत "भरपूर" यानी के लबालब भरा हुआ है । तू स्वयं इस अमृत के सिवा और कुछ भी नहीं है "मनमुखा साद न आया" पर जो आत्मा "मन" के कहने पर चलती है, वो इसके स्वाद को कभी नहीं सुपने में भी चख अथवा अनुभव कर पाती । "ज्यू कस्तूरी मृग न जाणें भरमदा भरम भुलाइआ ।" ये एक मिसाल प्रभु प्रेरणा में ब्यान की गई है कि जैसे कस्तूरी (एक सुगंधित पदार्थ) होती तो नाभि में ही है । पर वो सुगन्ध का दीवाना हुआ उसकी तलाश झाड़ियों में करता हुआ जिन्दगी भर अपने जन्म को व्यर्थ खो बैठता है । न तो ये सुगन्धित पदार्थ ही उसे मिलता है और न उस की इस वासना की तृप्ति ही होती है । हो ही कैसे सकती है ? जो चीज जहाँ है नहीं, उसे आप यदि वहाँ तलाश करते हो तो भला आप की ये तलाश कौन से युग काल में पूरी होगी ? अर्थात अनन्त काल के बाद भी केवल आप को ऐसी ही अनन्त प्रयासों से भरी हुई अकथ मेहनतें केवल आप का मुँह चिढ़ाने को ही प्रस्तुत होंगी । निश्चित रूप से केवल यही नतीजा आपके हाथ में आने वाला है जिसे देखना सुनना कभी सुपने में भी आप को पसन्द ही न होगा । "मन रे थिर रह मत कत जाही जीउ । बाहर ढूँढत बहुत दुख पावह घर अंमृत घट माही जीउ ।" इसी अपने "अमृत के भण्डार रूपी मूल" को प्राप्त करने अथवा वहाँ तक पहुँच जाने के लिये तूने अपने अनन्त जन्म अनन्त काल से

केवल इसकी तलाश बाहर करने में ही व्यर्थ गवां दिये हैं । तुझे तो अपने अपनाये जाने वाले समस्त विशेष कीमती-2 कार्यों से स्थिर अर्थात "उपराम" होने की प्रभु ताकिद कर रहे हैं । कि तुझे कहीं भटकने की जरूरत ही नहीं है, वो अमृत का भण्डार अर्थात मैं स्वंय निरन्तर तेरे रोम-2 में भरपूर समाया हुआ हूँ, केवल बाहर तलाश करने के कारण ही तुझे "अनन्त दुखों" का सामना बहुत लम्बे समय से करने के लिये मजबूर होना पड़ रहा है निश्चित रूप से । "अवगुण छोड गुणा कउ धावह - कर अवगुण पछताही जीउ ।" इस "भण्डार अमृत" को प्राप्त करने का साधन केवल "अवगुणों का त्याग" मात्र ही है । अर्थात इस अमृत रूपी भण्डार तक तू यदि पहुँचना चाहता है, तो इसका उपाय केवल "रहत-मर्यादा" रूपी जीवन को व्यवहारिक रूप से जीना ही समर्थ साधन है । इसी को गुणों को एकत्र करना कहा जाता है । यदि "परहेजगारी" रूपी जीवन को व्यवहारिक रूप से अपनाने में अपने को तू दूर रखेगा तो यकीनी तौर पर जान ले कि तुझे बहुत पछताना पड़ेगा अर्थात दुख उठाने को तुझे मजबूर होना ही पड़ेगा ! "सर-अपसर की सार न जाणै - फिर-फिर कीच बुडाही जीउ ।" "कीच यानी कीचड़" गंद से भरा हुआ स्थान । कौन सा है यह दुर्लभ स्थान ? जहाँ आप सजा कर के बैठे हुए हो । अर्थात आप आत्मा हो, इस कीचड़ यानी के बिसटा अथवा दुर्गन्ध के पास यानी के शरीर में फँसे अथवा कैद हो । तुझे इन "मुर्दों के देशों"

(जो केवल एक बड़े कीचड़ से भरा हुआ भयानक समुंद्र ही है) का नियम पता नहीं है । यहाँ केवल धोखा ही धोखा है । वफा अथवा हमदर्दी नाम की कोई भी "दुर्लभ वस्तु" तुझे अनन्त कोशिशों के बावजूद कभी सुपने में भी प्राप्त होनी सम्भव ही नहीं है । इन "दुर्लभ भेदों" के न जानने के कारण ही केवल तुझे बार-2 जब भी इस भयानक दलदल से लबालब भरे हुए समुंद्र से निकलने का अवसर प्राप्त होता है, तो तू इस "दुर्लभ अवसर" अर्थात "कीमती मनुष्य जन्म" को इस केवल व्यर्थ की परेशानियों पर ही खर्च करने के कारण खो देता है और फिर से इस भयावले अंधे कुँऐ में अपने को और गहरा धकेल देने की दुर्लभ गल्ती को बार-2 दोहराता रहता है । "अन्तर मैल लोभ बह झूठे - बाहर नावह काही जीउ ।" अन्दर तो तेरे विशय वासनाओं का अथाह समुंद्र ठां-ठां मार रहा है । जिन्हें पूरा करने के लिये ही केवल तू निरन्तर दिन भर दौड़ता ही रहता है । रात सुपने में भी तू केवल उन्हें पूरा करने के ही मनसूबे बाँधता रहता है निरन्तर । हर जायज अथवा नाजायज तरीके से तू केवल अपने लोभ अथवा स्वार्थ को ही पूरा करने में धरती आकाश एक करने में ही लगा हुआ है । और बाहर दुनिया की आँखों में मिट्टी डालने के लिये मुखौटा पहन लेता है कि तुझे कोई पहचान ही न सके । अर्थात गुर सिख - गुरमुख परिवार वाला सत्संगी-परमार्थी-अमृतधारी इत्यादि कई तरह के मुखौटे तुझे कैसे इन "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" के

दरबार में निरपराध साबित करने में समर्थ हो सकेंगें ? क्योंकि ये समस्त तेरे प्यारे-2 रूप अथवा मुखौटे तो यहीं अग्नि भेंट कर ही दिये जायेंगे, तेरे अपने ही प्यारे-2 सम्बन्धियों द्वारा । अगर साथ कुछ जायेगा तो केवल तेरा अपना किया हुआ "दुर्लभ कारनामा ।" अच्छा या बुरा जैसा भी होगा कारनामा कमाने का ढंग तेरा, तू भूले से भी यहाँ इस ढंग का एक छोटे-से-छोटा अंश भी न रख सकेगा । और जिन सुन्दर-2 तरीकों को प्रयोग में ला करके तूने ये "दुर्लभ-2 आविष्कार" किये हैं न, सब के सब आविष्कार तेरे सम्बन्धियों का मनोरंजन करने अथवा आनन्द देने के लिये केवल यहीं रहेगें ऐसा तू निश्चित रूप से जान ले कि तू इन "दुर्लभ आविष्कारों" का एक छोटा सा कण भी साथ ले जाने में कभी सुपने में भी समर्थ हो ही न सकेगा ऐसा तू निश्चित समझ । ये बाहर के तेरे समस्त महान-2 तीर्थों (बड़े-2 हिमालयों के कुण्ड सहित विशेष रूप से) में लगाई गई "डुबकिया अथवा स्नान" तुझे अवश्य जल्दी डुबोने में ही केवल "निश्चित रूप से भार" विशेष ही साबित होंगी । "अन्तर मैल जे तीरथ नावै - तिस बैकुण्ठ न जाणा । लोग पतीणे कछू न जाणै - नाही राम इआणा ।" इआणा अर्थात काणा अथवा मूर्ख या मन्द बुद्धि वाला । यानी के जड़ चेतन में समायी हुई ताकत अधूरी नहीं है विद्वान (मूर्ख श्रेणी के केवल) प्राणी उसे तू कैसे धोखा दे सकेगा । उसकी प्राण शक्ति को तू केवल अपने लोभ अथवा स्वार्थो को पूरा करने में ही खर्च कर

चुका है । अब इस "दुर्लभ चोरी विशेष" को तू कैसे छुपा लेगा ? अर्थात तू अवश्य उसके दरबार में झूठा अथवा चोर साबित हो ही जायेगा निश्चित रूप से । दुनिया की आँखों में तो तूने मिट्टी डाल ही दी कि भाई बहुत गुरमुख परिवार है नियम बाँध रखा है हर साल ये "दुर्लभ तीर्थ" नाम की "विशेष कालिख" मुँह पर पोतने का । मुबारक हो तेरी ये महान उपलब्धि अथवा आविष्कार । ठीक ही तो है जो कल काम होना अथवा करना है उसे आज ही करने का अभ्यास कर ही लिया जाये तो फिर बाद में दिक्कत नहीं होती । अर्थात जो कालिख कल प्रभु के दरबार में पुतने वाली है, उस "दुर्लभ कमाई अथवा उपलब्धि" को स्थिर रखने के लिये भी यदि आज से ही अभ्यास शुरू कर दिया जाये तो भाई काफी "कार्य क्षमता" अवश्य उत्पन्न हो ही जाती है निश्चित रूप से । शायद यही "गुप्त भेद" है आप का इन उत्कृष्ट कार्यों में व्यस्त रहने का ! आप तो सचमुच बहुत चालाक अथवा "छुपे रूस्तम" ही निकले ! "निरमल नाम जपह सद गुरमुख - अंतर की गत ताही जीउ ।" गुर+मुख-अर्थात गुरु यानी के केवल प्रकाशित रागमई आवाज मुख यानी के समर्था केवल । केवल जो आत्मा रहत मर्यादा रूपी जीवन जीने वाली व्यवहारिक आत्मा अर्थात इस तरह की जीवन जीने वाली आत्मा ही केवल इस "निरमल" लफज को सार्थक बनाने में समर्थ हो सकती है । दाड़ी-चोलों का यहाँ कोई भी भाव सुपने में भी नहीं है सावधान । पंथ तो निरमल विशेष-2 बहुत

चल रहे हैं। जरा नजदीक से देखोगे तो आप को पता चलेगा कि "स्याह काला" रंग भी इन दुर्लभ-2 निर्मलों पर चढ़ने से अवश्य इन्कार कर ही देगा यकीनी तौर पर निश्चित रूप से। "नाम" केवल प्रकाश जो रागमयी आवाज अर्थात शब्द से निरन्तर प्रत्यक्ष होता है। अर्थात इस तेरे "मूल-अमृत के भण्डार" दुर्लभ तक पहुँचने का विशेष साधन केवल ये रागमई प्रकाशित आवाज ही है। और ये बाहर कहीं नहीं, निरन्तर तेरे साथ तेरे-रोम-2 में समाई हुई है। "गति" अर्थात वहाँ उस अमृत के भण्डार तक पहुँचने का "केवल दुर्लभ साधन।" ये सब तभी हो सकेगा जब तू केवल इस "एक" को प्रत्यक्ष कर लेगा अर्थात इसे प्रत्यक्ष करने की समर्था प्राप्त कर लेगा यानी के केवल ऐसा गुरमुख बन सकेगा! बिना ऐसा गुरमुख हुए तू कभी सुपने में भी इस गति को अथवा वहाँ तक पहुँचने की समर्था को प्राप्त करने में तू सदा असमर्थ ही साबित होगा। "आंव" कहते हैं "उम्र" को। "आंव घटे नर न बूझे।" आयु तो घट रही है अर्थात तेरा जीवन तो बीतता जा रहा है अथवा छोटा हो रहा है। उस तथ्य अथवा सच को भुला कर के अपना "दुर्लभ कीमती जन्म" तू ताली पीटने अथवा नाचने कूदने में व्यतीत करने में ही केवल अपने को श्रेष्ठ स्थापित कर रहा है। ये तेरा दुर्लभ "हैपी बर्थ डे" विद्वान प्राणी (महामूर्ख श्रेणी के) तुझे बहुत महँगा साबित होगा। इसे तू निश्चित रूप से अभी से तुरन्त गाँठ बाँध ले यदि "कुछ" बचना चाहता है तो! जीव के

जन्मते ही शैतान प्रत्यक्ष सिर पर सवार उल्टी गिनती गिनना शुरू कर देता है । "नित मूसा लाज टुकाई ।" लाज यानी के रस्सी । मूसा यानी के चूहा । अब ये कौन सी रस्सी है जिसे चूहा निरन्तर यानी के "नित ।" टुकाई यानी के कुतरना । कुतर रहा है । विचार करिये ! प्रभु प्रेरणा है कि ये शैतान अथवा काल रूपी चूहा आप की उम्र रूपी रस्सी को निरन्तर कुतर रहा है अथवा हजम करता जा रहा है । इस सच्चे भेद से अनभिज्ञ तू "ताली पीटने" में अपने को बढ़िया बता रहा है । यदि तुझे सुपने में भी इन "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" का आभास तेरे ये "नकली बने परमात्मा" इशारे में भी अगर कुछ बता देते तो शायद तू अपने इस "कीमती दुर्लभ अवसर" को क्यों तू इस तरह के अनन्त कार्य के धन्धों पर खर्च कर के अपने पैरों पर "घुंघरू" बाँधने के लिये अवश्य आवश्यक रूप से मजबूर कर दिया जाता है ! वासना जीव के लिये "पिंजरे" विशेष का निर्धारण करने का केवल एक "निश्चित उपाय" अथवा विशेष साधन मात्र ही है । "नपुंसक" नाम का पिंजरा इस वासना का निश्चित उपाय प्रभु की एक तुच्छ सी भेंट है । फिर इस पिंजरे का श्रृंगार क्या तू स्वंय करने में कभी भी सुपने में भी समर्थ हो सकता है । कदापि हर्गिज नहीं । फिर ये उत्कृष्ट देन भी तुझे केवल प्रभु से ही प्राप्त होनी सम्भव है । अर्थात "नपुंसक" नाम के पिंजरे को ही केवल तू रोशन करने पर मजबूर नहीं कर दिया जायेगा तुझे अपने सुन्दर-2 पाँवों में "अवश्य आवश्यक" रूप से

"घुंघरू" भी बाँधने ही पड़ेगे ! क्योंकि बिना "घुंघरू" बाँधे तेरा "ठुमका विशेष" कैसे सभी देखने तथा सुनने वाली "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" की नजर में काबिले तारीफ साबित हो सकेगा । जब "घुंघरू" बाँध दिये जायेंगे न तब फिर तू खूब ठुमके लगा-2 कर के ताल ठोक कर के नाचना । चिन्ता मत कर तालियां अपने आप उस वक्त बजने लगेंगी, उसके लिये तुझे "अधिक श्रम" करना ही नहीं पड़ेगा । इसकी तो भाई तुझे हम भी गारन्टी देते ही हैं । शायद इसीलिये तू ये अभ्यास "बिना घुंघरू" के हर वर्ष (कभी-2 दो बार भी) नियम से अपने सभी प्यारे-2 सम्बन्धियों सहित बड़ी सजधज तथा धूमधाम से गाजे-बाजे के साथ बड़ी ईमानदारी तथा मेहनत से "सजीव" बनाने के लिये ही शायद करता रहता है भई काबिले तारीफ है तेरा ये सुन्दर तथा "सुन्दरियों विशेष" से लबालब भरा हुआ "उत्कृष्ट उपलब्धियों" का ये "दुर्लभ जन्म" में "दुर्लभ समारोह ।" प्रभु के दरबार में बेशक कुछ अधिक समय लग जाए पर न्याय में कोई "शक" की गुंजाइश कभी सुपने में भी नहीं रहती । तेरी इसी ताली पीटने तथा नाचने गाने की "दुर्लभ उत्कृष्ट" इच्छा को सूक्ष्म दृष्टि से जान कर के ही उसने तुझे अपने "प्यारे-2 विशेष-विशेष" अनुयाइयों अथवा सम्बन्धियों सहित ये "दुर्लभ विशेष नपुसंक" नाम का पिंजरा धुर से "घुंघरुओं" सहित केवल तेरी इसी मीठी तथा रस से भरी कामना विशेष को ध्यान में रख कर के ही तेरी निजी सेवा करने

के लिये ही केवल तेरे आगे प्रस्तुत कर दिया है । इस "दुर्लभ प्रभु" की "दुर्लभ कीमती भेंट" को तू अवश्य संभाल कर रखेगा, उसका तो हमें तुझ पर पूरा यकीन अथवा भरोसा ही है । तेरी इस नियम से की जाने वाली मेहनत अथवा अभ्यास को देख कर के ही हम ऐसा दावा यकीनी रूप से पेश करने पर मजबूर हो ही गये हैं । फिर भाई अब तो उस प्रभु की भी विशेष दया तुझ पर तेरे अनुयाइयों सहित पर विशेष रूप से बरस ही पड़ी है छप्पड़ फाड़ कर इन "विशेष घुंघरुओं" के रूप में ! मुबारक हो तेरी इस दुर्लभ उत्कृष्ट कमाई को । अब तो भाई खूब रोज ही महफिल जमेंगी नाचने-गाने तथा ताली पीटने की । घुंघरू बजेंगे सो अलग ही शोभा होगी इस शान की । प्रभु ने तो भाई सचमुच "घुंघरू बाँध" कर "चार चाँद" लगा दिये तेरी इस "दुर्लभ महफिल" को । देखियो सावधान रहियो कही किसी "मनचली विशेष" की "काली" सी नजर न लग जाये । अवश्य सामने बैठा कर किसी "सिद्धि विशेष" से अपनी तथा इस "दुर्लभ महफिल" को रोशन करने वाले "दुर्लभ सितारों" अथवा अनुयाईयों की भी नजर विशेष याद से अवश्य उतरवा ही लियो । भाई कलियुग का जमाना है भला किस पर भरोसा किया जा सकता है । फिर तेरा तो शुरू से ही ऐसा हाल है कि कहीं थोड़ी काली सी सूरत देखी नहीं कि बिस्तर तक बदलने की आवश्यकता पड़ ही जाती है पुश्तैनी कमी जो ठहरी । इसलिये जरा सावधान रहियो । अब तो बस केवल यही

जानना शेष रहेगा कि कहाँ कोई कब पैदा हो गया । बस "मंडली विशेष" ले कर के पहुँच जाना । शेष आगे का धन्धा तो भाई नियम से बिना नागा बड़ी ईमानदारी तथा मेहनत से लगातार करते ही आ रहे हो, उसमें तो कोई दिक्कत आनी सम्भव ही नहीं है कभी सुपने में भी ।

"कुदम करे पशु-पंखिआ दिसे नाही काल ।" प्रभु प्रेरणा स्पष्ट है कि ये सब नाचने कूदने-रंग तमाशे इत्यादि ताली पीटने का धन्धा केवल पशु-परिन्दों का ही जन्मजात केवल "खानदानी व्यवसाय" है निश्चित रूप से । अब तो यह धन्धा मनुष्य श्रेणी में आई आत्मायें भी इसी पशु-परिन्दों के धन्धे को खूब सज-धज कर करती हैं । तो ऐसा क्यों अथवा कौन-2 सी "दुर्लभ आत्मायें" इस "दुर्लभ व्यवसायों" को अपनाती हैं ? उसे भी प्रभु ब्यान करते हैं, कि वो आत्मायें जिन्हें अपने सिर पर मौत-शैतान-काल अथवा "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतें" बैठी उल्टी गिनती गिनते दिखायी अथवा सुनाई ही नहीं देती ! "प्राणी तू आयो लाहा लैण - लगा कित कुफक्कड़े - सभ मुकदी चली रैण ।" हे "दुर्लभ प्राणी" तू तो इस पिंजरे में लाभ प्राप्त करने के लिये केवल किसी की "दुर्लभ विशेष दया" से ही आया था । अपनी इस "दुर्लभ कीमती उपलब्धि" को तूने केवल व्यर्थ के धन्धों, नाचने कूदने अथवा ताली पीटने में खर्च करने को अपनी "बुद्धि

विशेष" का साधन स्थापित कर रखा है । कुफक्कड़ा कहते हैं कि सारा दिन मेहनत भी की और शाम को हाथ-पल्ले भी कुछ न पड़ा । यानी मेहनत तो गई उल्टा भूखा और तड़पना पड़ा । "विशेष बुद्धिमानी" का फल भी "प्रभु दरबार" से विशेष ही मिलता है । रैण यानी के रात । अर्थात तेरी आयु रूपी रात निरन्तर घटती अथवा बीतती चली जा रही है । और तू अपने "दुर्लभ मानुख जन्म" की कीमत को न समझ कर, उसे केवल इन व्यर्थ के ताली पीटने तथा नाचने-गाने वाले धन्धों में मिले हुए इस "दुर्लभ कीमती अवसर" को निरन्तर खोता चला जा रहा है । बदले में तुझे इसके निकृष्ट-भोगी जून अथवा घोर पार्क या नर्क भुगतने पर अवश्य आवश्यक रूप से विवश होना ही पड़ेगा निश्चित रूप से !

प्रभु प्रेरणा स्पष्ट ही है कि जीव का इस दुर्लभ जन्म में आना कुछ विशेष अर्थ अथवा भाव रखता है । उस विशेष अर्थ को प्राप्त करने के वास्ते ही उसे रोज की निश्चित प्राण-शक्ति "प्रभु की विशेष दया" से ही केवल प्राप्त होती है । उसे अब किस पर कितना खर्च करना है, ये फैसला हर आत्मा का अपना निजी व्यवसाय है जिन्दगी भर का अनन्त जन्मों का होम वर्क । इस निश्चित पूँजी में से कोई चाह कर के भी एक भी पाई अथवा प्राण अपनी अथवा "किसी और विशेष" की मर्जी सहित न तो जमा ही

कर सकता है और न कभी कम ही करने में समर्थ हो सकता है कभी सुपने में भी । इसके खर्च करने पर निरन्तर कोई "सूक्ष्म अदृश्य ताकत" भरपूर नजर रखती है । उसे कभी भी किसी भी यत्न से अनन्त प्रयत्नों के बावजूद धोखा देना केवल असमर्थ अपने को साबित करना ही है । क्योंकि जड़ तथा चेतन केवल इस ताकत के सिवाय और कुछ भी नहीं है इस कुल आलम में ! इस की कोई गिनती करने वाला उपलब्ध आपको नहीं मिलेगा कि आप ने कितनी पीढ़ियों से कितनी ड्यूटियां दे रखी हैं कितने मत्थे टेक रखे हैं अथवा तोपों की सलामियाँ दी अथवा कबूल कर रखी हैं, इत्यादि कितने बड़े-2 तथा भारी-2 अमृत विशेष के कुण्डों का भोग लगा अथवा खाली कर रखा है । कितनों से ठप्पे अथवा मोहर लगवा रखी है यानी के बड़े-2 भारी-2 परमात्माओं के भी बाप बने बैठों से बड़े-2 कीमती "नाम विशेष" ले कर छुपा रखे हैं । फैसला केवल फकीर विशेष के इस वचन अनुसार निश्चित समझियेगा । "अमलां उते होन निबेड़े - खड़ियां रहन गीआं जातां ।" अमल यानी व्यवहार । अर्थात ये प्राण तूने किस पर कितना कैसे किस ढंग से खर्च किया । तेरी "जाता" अर्थात मत-धर्म इत्यादि की अपनाई गयी क्रियाएें केवल खड़ी तालियां पीटेंगी अथवा तमाशा देखेंगी तेरा, जब तुझे कोई बालों से पकड़ कर घसीट कर ले जायेगा । तब तुझे सब ये प्रभु वाक्य आकाश फाड़ कर चमकते दिखायी दे जायेंगे निश्चित रूप से । फैसला तेरा

अपना केवल "निजी व्यवसाय" ही है कि तुझे अपने पैरों में "घुंघरू" बाँधने पसन्द हैं या इस अमृत के भण्डार अर्थात प्रभु को "जीते जी केवल" निश्चित रूप से प्रत्यक्ष करके सदा के लिये अपने को इस निकृष्ट जेल खाने से अथवा निकृष्ट घोर पिंजरों से मुक्त करवा लेना ज्यादातर श्रेयस्कर अनुभव होता है ! "अमृत नाम भोजन हर देई - कोट मधे कोई विरला लेई ।" अमृत का भण्डार केवल ये नाम अर्थात केवल रागमयी आवाज से प्रत्यक्ष होने वाला निरन्तर दुर्लभ ये प्रकाश ही है । ये आत्मा को "केवल अमृत्व" प्रदान करने में समर्थ साधन है । अर्थात इस जेल खाने से छूटने का "केवल दुर्लभ उपाय अथवा साधन ।" और ये केवल उस "अकाल पुरख परमात्मा" के अपने निज स्वरूप होने के कारण केवल उस प्रभु की स्वयं की विशेष रजा से ही प्रत्यक्ष होना सम्भव है प्रत्येक काल में निश्चित रूप से । अब आप अनन्त आत्माओं के इस निकृष्ट जेलखाने में "दुर्लभ मानव जन्म" के "दुर्लभ अवसर" को प्राप्त कर चुके हैं । वो "विरला आत्मा" केवल आप ही हैं निश्चित रूप से । अब ये आप का शौक़ अथवा निजी व्यवसाय ही है कि आप उस प्रभु अथवा अमृत की बजाय घुंघरू बाँधना पैरों में पसन्द करते हैं । जो विशेष तौर पर काफी काबिले तारीफ है "अवश्य आवश्यक" रूप से इस "दुर्लभ मानुख जन्म" में । नियमानुसार इस मृत लोक अथवा शमशान भूमि में कभी भी किसी को भी कुछ भी भूले से भी सुपने में भी मुफ्त में प्राप्त

अथवा उपलब्ध ही होना केवल असम्भव लफज को ही सार्थक बनाना है प्रत्येक काल में निश्चित रूप से। फिर कैसे मान लिया जाये कि "कोई" पिलायेगा कुछ विशेष-2 और आप केवल उस विशेष को पी कर के ही अमर हो जाओगे तथा गुरू वाले साबित हो जाओगे! "सुर-नर मुनजन खोजदे - सो अमृत गुर पाही जीउ।" अर्थात देवता-मनुष्य तथा ऋषि मुनि इत्यादि सभी विशेष-2 जूनों में आयी आत्मायें अमर होने के वास्ते यानी के जन्म मरन के भयानक घोर-2 दुखों से सदा के लिये मुक्त होने के वास्ते, स्वंय को अमर करने अथवा बनाने के लिये इस "दुर्लभ विशेष अमृत" की खोज अथवा तलाश में निरन्तर प्रयन्नषील है। अब ये अमर अथवा मुक्त कर देने वाला (सभी भयानक दुखों से) अमृत केवल गुरू यानी के केवल "रागमई प्रकाशित आवाज" (निश्चित रूप से प्रत्येक काल में) के पास अर्थात प्रभु के स्वंय का निज विशेष स्वरूप यानी के समर्था ही है निश्चित रूप से। "नउ निध अमृत प्रभ का नाउ।" अर्थात सभी "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" की सिद्धियाँ अथवा समर्था विशेष-2 जिन्हें "नौ निध" यानी के नौ मुख्य-2 खजाने तथा अठारह मुख्य विशेष-2 सिद्धियाँ भी कहा जाता है, केवल नाउ यानी के "केवल प्रकाश" का ही विकृत स्वरूप अथवा समर्था मात्र ही है निश्चित रूप से। ये प्रभु की ही ताकत विशेष "विपक्ष अथवा शैतानी ताकतों" के पक्ष में आत्मा विशेष को लुभाने अथवा रोकने का एक दृढ़ साधन है निश्चित रूप

से, "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" का प्रत्येक काल में । क्योंकि इन विशेष-2 सिद्धियों अथवा समर्थो को प्रत्यक्ष करना असम्भव जैसा अकथ प्रयत्नों के बाद ही केवल उपलब्ध होना संम्भव होता है निश्चित रूप से । यानी के सिद्धि का आधार केवल "घोर तप" विशेष ही है प्रत्येक काल में निश्चित रूप से । फिर प्रत्यक्ष करने के बाद यदि आत्मा विशेष इनका प्रयोग करने लगती है तो आत्मा विशेष की कमाई अथवा तप खर्च होने लगता है या कम होता जाता है निरन्तर ! यानी के "घोर तप" को हज्म करने वाला "भयानक सूक्ष्म मीठा सा दुर्लभ कीड़ा विशेष" केवल "सिद्धि" ही कहलाता है प्रत्येक काल में निश्चित रूप से। सच्चे परमार्थी विशेष को इस "भयानक मीठे से कीड़े" से सदा आवश्यक रूप से सावधान रहना ही श्रेयस्कर अथवा कल्याणकारी है आत्मा विशेष के केवल स्वंय के ही निजी विकास के हेतू निश्चित रूप से । कमाई कब ये मीठा सा कीड़ा हज्म करके आपको आखिरी "गुड बाई" विशेष कर गया आपको इसका आभास भी न हो सकेगा ! पता उस वक्त चलेगा जब ये "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतें" आप को घसीट कर के ले जायेंगी केवल आप के किये हुए का भुगतान वसूल करने के लिये निश्चित रूप से, तभी आप मोह रूपी नींद से जागोगे-पर अब कुछ भी कर सकने में आप केवल असमर्थ ही साबित होंगे निश्चित रूप से । अर्थात आप कुछ करना चाहने पर भी बचने का कुछ भी उपाय कर ही न सकोगे यकीनी तौर पर ।

अब इस नाउ के विकृत स्वरूप अथवा समर्था यानी के सिद्धि विशेष से बचने का उपाय क्या है ? "अमृत" निश्चित रूप से । अब ये अमृत क्या है ? ये भी केवल "प्रभ का नाउ" यानी के केवल प्रकाश ही है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में । नाउ यानी के प्रकाश का विकृत स्वरूप अथवा समर्था अर्थात सिद्धि यदि बन्धनकारी है तो नाउ यानी के केवल प्रकाश का ही "निर्मल विशेष स्वरूप" अथवा समर्था ही कल्याणकारी या बन्धनों से मुक्त करने वाला है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में आत्मा विशेष के लिये । जैसे लोहे को लोहा ही काटता है विशेष रूप अथवा अवस्था में वैसे ही नाउ के विकृत स्वरूप सिद्धि का इलाज भी केवल नाउ यानी के "प्रकाश निर्मल" अथवा "परम चेतन सत्ता" या रागमई प्रकाशित आवाज ही है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में । इसी भेद विशेष के कारण "नउ निध" यानी के बन्धन तथा "अमृत" यानी के मुक्ति सभी प्रकार के बन्धनों विशेष से दोनों लफजों का प्रयोग "प्रभ का नाउ" लफज विशेष के संग प्रयोग हुआ है । क्योंकि सभी जड़ चेतन का आधार अथवा मूल केवल "रागमई प्रकाशित आवाज" अथवा परम चेतन सत्ता के सिवा और दूसरा कुछ भी नहीं है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में । केवल उस एक विशेष ने ही स्वंय को अलग-2 ढंग से प्रस्तुत किया है निश्चित रूप से । इसीलिये समस्त टकराव केवल बाहरी आवरण में ही है । जैसे-2 सूक्ष्मता को प्राप्त होते जाओगे वैसे-2 समस्त टकराव अथवा

घर्षण समाप्त होता जायेगा और फिर केवल वही एक "रागमई प्रकाशित आवाज" ही केवल "उच्छिष्ट विशेष" बचेगी निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। इसीलिये इसे एक खेल अथवा तमाशा मात्र ही कहा गया है निश्चित रूप से। आत्मा में कुछ भी अभाव प्रत्यक्ष होना केवल असंभव ही है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। परन्तु यह सुख तथा दुख दोनों का सूक्ष्म रूप से भी अवश्य अनुभव करती ही है प्रत्येक काल में निश्चित रूप से। सुख-दुख से ऊपर उठने वाली "दुर्लभ आत्मा विशेष" ही केवल "परम चेतन सत्ता" को अनुभव कर पाती है। "सुख दुख सम कर नाम न छोडउ आपे बक्श मिलावण हारा।" केवल प्रभु के बक्शने के बाद ही यह दुर्लभ अवस्था प्रत्यक्ष उपलब्ध होती है। किस आत्मा को ? तो वो है प्रत्येक अवस्था यानी के सुख तथा दुख दोनों में केवल निर्मल हृदय से एक "अकाल पुरख परमात्मा" का ही निरन्तर चिन्तन-ध्यान अथवा शौक़ विशेष रखने वाली "दुर्लभ विशेष आत्मा" को ही केवल इस खेल अथवा तमाशे से अलग किया जाता है या बक्शा जाता है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। "समर्थ" केवल वही है जिसने यह जाल विशेष रचा है। शेष सभी केवल इस खेल में मोहरे मात्र हैं। खेलने वाला केवल एक प्रभु ही है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। आत्मा को इस खेल से अलग होने के लिये अवश्य "नियम-रहत मर्यादा" अनुसार अपने पक्ष विशेष को साबित करना ही पड़ता है दृढ़ता के साथ निश्चित

रूप से प्रत्येक काल में । सरकार का कार्य नियम का प्रचार करना है केवल । नियम को जानना तथा "नियम" के अनुसार "व्यवहारिक जीवन जीना" केवल आत्मा के स्वंय के कल्याण के हेतू ही आवश्यक है निश्चित रूप से, न कि सरकार के लाभ अथवा कल्याण के हेतू-केवल मनुष्य के जन्म में केवल आखिरी मुश्किल की घड़ी विशेष अथवा मौत के आने से पहले, जीते जी तक ही ये नियम पालन सम्भव हो सकता है निश्चित रूप से । अब ये नाम रूपी अमृत कहाँ मिलता है ? सो बताते हैं कि "देही मह इसका बिस्राम ।" अर्थात यह अमृत दुर्लभ विशेष केवल तुझे तेरी अपनी स्वंय की ही देह यानी के शरीर में ही तुझे उपलब्ध होगा केवल तुझे ही अमर कर देने के वास्ते, इस अमृत का अखुट भण्डार निजी केवल तेरी अपनी स्वंय की ही "दुर्लभ सम्पत्ति" के रूप में तेरे स्वंय के आने अथवा पहुँचने का ही केवल इन्तजार किया जा रहा है तेरे ही स्वंय के शरीर में खास स्थान पर निश्चित रूप से । "उच्चे खासे महल दे बांगा देय खुदाय । सुते बांग न सुण सके रहया खुदा जगाये ।" महल यानी के शरीर-(काइआ महल मन्दर घर हर का) खास स्थान है सिर शरीर का, जहाँ से पूरे महल अथवा शरीर को नियन्त्रण में रखा जाता है । सिर की जरा सी नस विशेष भी फूल जाये तो प्रमाण पत्र लिखित में चिकित्सक का उपलब्ध हो ही जाता है अपने आप कि अब शेष समय केवल पागलखाने विशेष में ही बिताओ निश्चित रूप से । "बांगा देय

खुदाय" अर्थात परमात्मा बांग यानी के आवाज़ दे रहा है अर्थात "रागमई प्रकाशित आवाज" निरन्तर उपलब्ध है केवल तुझे अमर कर देने के वास्ते। आप के समस्त "कीर्तन दरबार" केवल अधूरे हैं निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। केवल यही निरबाण कीरतन (अथवा रागमई प्रकाशित आवाज़) प्रत्येक काल में निरन्तर उपलब्ध रहता है निश्चित रूप से। "निरबाण कीरतन गावै करते का निमख सिमरत जितु छूटै।" इस "रागमई प्रकाशित आवाज" अथवा बिना रूके होने वाले कीर्तन विशेष "कर्ता" यानी के "परम चेतन सत्ता" के एक "दुर्लभ गुण विशेष" को सुनने तथा देखने वाली "दुर्लभ आत्मा विशेष" ही केवल "अमरत्व" को प्राप्त होती है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। अब जो वासनाओं की गहरी नींद में मग्न हैं अथवा सोये हुऐ हैं उन्हें ये बांग अथवा "रागमई प्रकाशित आवाज" न तो सुनाई ही देती है और न ही देखना संम्भव होता है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में। लेकिन खुदा तो निरन्तर आत्मा को जगा ही रहा है नियमानुसार "रहया खुदा जगाये।" अब ये "रागमई प्रकाशित आवाज" अथवा "अमृत" विशेष तभी उपलब्ध होता है जब "आत्मा विशेष" चार लफजों में व्यवहारिक रूप से पूरी उतरे प्रत्येक काल में निश्चित रूप से अर्थात "छोडह वेस" (सभी प्रकार के आवरण विशेष-2 मत धर्मों के अपनाये हुऐ रूपों वेसों से ऊपर उठना)-भेख (छल-कपट)-चतुराई (महान-2 जिम्मेदारियों को निभाने वाले मुखौटे विशेष-

2)-दुविधा (केवल "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" की प्रेरणाओं से स्वंय को ऊपर उठाना) तभी आत्मा विशेष "परम चेतन सत्ता" अथवा "रागमई प्रकाशित आवाज" या "अमृत विशेष" को बहुत थोड़ा सा चख अथवा अनुभव कर पाती है और फिर ये "आवाज आत्मा विशेष" को वहाँ ले जाती है जहाँ से ये प्रत्यक्ष होती है। वहाँ पर पहुँच कर ही केवल जीते जी ही आत्मा अमरत्व को प्राप्त होती है अर्थात जन्म-मरन के भयानक दुखों से मुक्त हो जाती है अथवा खेल से सदा के लिये अलग कर दी जाती है निश्चित रूप से। इसीलिये कहा है कि "सिमर एक ओंकार साचा सभ जगत जिन उपाइआ।" "ओंकार" केवल "परम चेतन सत्ता" अथवा "रागमई प्रकाशित आवाज" को गुरमुखी के लफज विशेष से व्यक्त करने का एक साधन मात्र है निश्चित रूप से, कोई परमात्मा इस में छुप कर के नहीं बैठा हुआ। "एकम" का भाव है कि समस्त दुखों से बचने के लिये आत्मा को केवल मनुष्य के जन्म में ही जीते जी ही केवल इस ओंकार यानी के "परम चेतन सत्ता" से मिल कर के एक हो जाना है निश्चित रूप से तभी केवल आत्मा की पूर्ण मुक्ति सम्भव है। "सत+गुर" प्रसादि अर्थात गुरु-केवल "रागमई प्रकाशित आवाज" जो केवल सृष्टि का प्रत्येक काल में निरन्तर उपलब्ध रहने वाला "सत" ही है निश्चित रूप से (किन्हीं भी विशेष-2 परमात्मा बने बैठे गद्दीधारियों का यहाँ कल्पना में भी कोई विचार ही नहीं है निश्चित रूप से। ऐसे "लोभी खूनी भेड़ियों"

रूपी परमात्माओं विशेष-2 से निरन्तर सावधान रहो । जो इस "दुर्लभ वाणी" विशेष "अकाल पुरख परमात्मा" की "आत्मिक प्रेरणा" को अपने ऊपर घटा कर अर्थ के अनर्थ प्रचारित करते हुऐ पूरी मनुष्य जाति को अन्धे कुँऐं में ढकेल रहे हैं अथवा "शैतानी घर" को ही मजबूत बनाने में मदद करते हुऐ स्वयं को श्रेष्ठ साबित कर रहे हैं । "सच्चे परमार्थी" के लिये इन से बच कर रहना ही केवल उनके स्वंय के हित अथवा कल्याण के हेतू श्रेयस्कर है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में !) "सत" लफज का प्रयोग केवल प्रत्येक काल में निरन्तर प्रत्यक्ष उपलब्ध रहने वाली "सत्ता विशेष" के लिये ही प्रयोग में लाया जाता है निश्चित रूप से । जो मिटता अथवा बदलता है निरन्तर, उसके लिये "सत" नहीं केवल "झूठ" लफज का ही उपयोग किया जाता है प्रत्येक काल में निश्चित रूप से । अब अपने "अधूरे-नकली परमात्माओं" विशेष-2 को फिट करो और देखो कि कौन से लफज को ये सार्थक बनाते हैं तथा इनका असली स्थान कहाँ है ? सत लफज के साथ या केवल झूठ लफज को ही सार्थक बनाने में समर्थ हैं प्रत्येक काल में निश्चित रूप से । आपके कितने ही परमात्मा मिट्टी से उठे और मिट्टी में ही लीन हो गये, जिन्हें बना कर पकड़े बैठे हो वो भी निरन्तर भुर रहे हैं चूने की दीवार की भांति, जल्दी ही वे भी मिट्टी में ही मिला दिये जायेंगे निश्चित रूप से । इसीलिये

"केवल सिमर" - "केवल उसे" जो प्रत्येक काल में प्रत्यक्ष उपलब्ध रहने वाला "केवल सत" यानी के "एक-ओंकार" है जिसने "सभ जगत जिन उपाइया" यानी के सब जड़-चेतन को प्रत्यक्ष किया है तथा सभी को निरन्तर धारण कर रखा है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में सत कहलाने का दुर्लभ इकलौता अधिकारी है । तभी "प्रसादि" यानी के "कृपा विशेष दया" के रूप में तुझे उपलब्ध होगी प्रभु की और तू केवल स्वंय ही उस एक "परम चेतन सत्ता" तक पहुँचने में समर्थ हो सकेगा या मिल करके एक हो जायेगा और तुझे तभी सभी दुखों से छुटकारा मिलना सम्भव हो सकेगा निश्चित रूप से । नियम स्पष्ट है कि बिना खर्च किये अथवा कीमत चुकाये कुछ भी उपलब्ध होना असम्भव ही है निश्चित रूप से प्रत्येक काल में । अब आप के पास कुछ अधिक ही पूँजी अथवा कमाई विशेष है तभी तो आप पानी में घोल-2 कर के अपनी रिजर्व पूँजी विशेष को (स्वंय तो केवल मौत के मुँह में आखिरी सांसे गिनते हुऐ) केवल दूसरों को झूठ में अमर बनाने के लिये अमरत्व पिला रहे हो अथवा प्रदान कर रहे हो ! बदले में खरीद क्या रहे हो केवल "यश ।" कितने दिन काट लोगे इस यश से? केवल यही "यश" नाम का "दुर्लभ मीठा सा कीड़ा" आत्मा के "सतो गुण" को ऐसे चाट जाता है जैसे कि दीमक लकड़ी को चाट जाती है निश्चित रूप से । फिर "सतो गुण" के अभाव में शेष सभी कार्यों को तो आत्मा सम्पन्न कर सकती है

केवल एक ही कार्य को सम्पन्न करने में प्रत्येक काल में केवल असमर्थ ही साबित होती है आत्मा निश्चित रूप से और वो है "प्रभु बन्दगी !" अर्थात मनुष्य के जन्म का अर्थ ही आपने बेच खाया निश्चित रूप से । चार दिन की चाँदनी फिर अनन्त जूनों की काली स्याह अंधेरी रात रूपी अमावस खड़ी केवल आप के आने भर का इन्तजार कर ही है निश्चित रूप से । फिर कब ये आप की दुर्लभ "अमावस" खत्म होगी आप को फिर से केवल एक मौका मिलेगा "मनुष्य के दुर्लभ जन्म विशेष" का इसी "अमृत के भण्डार" तक पहुँचने का, "काइआ अन्दर अमृतसर साचा ।" और आप फिर इस अमृत के भण्डार तक पहुँचने के बजाय अपनी "दुर्लभ हस्ती मनुष्य के जन्म" को दूसरों को जल विशेष पिलाने का "दुर्लभ पेशा" अपना कर "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" द्वारा लूट लिये जाओगे तथा किसी पिंजरे विशेष को रोशन करने के वास्ते अवश्य मजबूर कर ही दिये जाओगे निश्चित रूप से । "मिल जगदीश मिलन की बरिआ चिरंकाल एह देह संजरिआ ।" जो कमाई आपकी अगले जन्मों के लिये "रिजर्व" रखी हुई थी उसे आप ने अभी इसी जन्म में खर्च कर लिया, इसी जन्म में "यश" को खरीद कर । अब आगे के जन्मों में आप को जीवित रहने के लिये भी आवश्यक साधन तक उपलब्ध होने केवल असंभव ही हैं निश्चित रूप से । नजर दौड़ा कर देख लो, काम तो करना चाहता है पर कार्य उपलब्ध ही नहीं होता-फिर अकथ मेहनतों के बावजूद केवल

नुकसान ही उठाना पड़ता है तथा मुँह छुपाने को भी स्थान उपलब्ध ही नहीं होता फिर पेट कहाँ से कैसे भरे ! इन्हीं सब दुर्लभ-2 करतूतों का ही केवल थोड़ा सा फल मात्र है निश्चित रूप से ये उपलब्ध आभावों से भरा जीवन लबालब । अपनी कमाई केवल स्वंय के अमृत भण्डार तक पहुँचने तक पर ही खर्च करना केवल बुद्धिमानी है निश्चित रूप से प्रत्येक उपलब्ध काल विशेष में । अब जिस "आत्मा विशेष" ने ये धन्धा किया उसके पास "प्रभु की विशेष दया" अथवा "पूँजी" उपलब्ध थी जो कभी नहीं घटती लेकिन उसे भी स्थिर रखने के हेतू प्रभु का ध्यान निरन्तर करना ही पड़ता है प्रत्येक काल में । तभी गुरु घर की दसों आत्मायें आधी रात से सुबह तक केवल इसी पूँजी विशेष को प्राप्त कर लेने के बावजूद स्थिर रखने के लिये "प्रभु का निरन्तर नियम से ध्यान" करती थीं निश्चित रूप से । अब तेरा क्या धंधा है ? न तो ये पूँजी विशेष ही उपलब्ध है और न ही "अकाल पुरख परमात्मा" का शौक़ अथवा ध्यान ही है । रात भर कामनाओं के अथाह समुंद्र में गोता लगाया जाता है तथा सवेरे जल विशेष का दान किया जाता है दानी विशेष बन कर-नतीजा खुद ही लिख लो । इस पूँजी विशेष को उपलब्ध करना असम्भव सा ही है पर प्राप्त करने के बाद हजम करना तो केवल निश्चित रूप से असंभव लफज को ही सार्थक बनाना है "प्रभु की विशेष दया" के अभाव में । कारण कि ये पूँजी विशेष भी एक दुर्लभ न उतरने वाले नशे की तरह से

ही है । जब मुँह से निकलने वाले प्रत्येक लफज विशेष को पूरा कर दिया जाता है तो आत्मा की विचार शक्ति क्षीण होने लगती है तब शैतानी पंजे तेज होने लगते हैं अर्थात इसका लाभ "शैतानी ताकतें" उठाती हैं तथा पूँजी विशेष को शैतानी ताकतें ऐसे कार्यो पर खर्च करवा देती हैं जिससे बाद में केवल "शैतानी ताकतों" को ही लाभ पहुँचता है निश्चित रूप से । यह पूँजी विशेष केवल आत्मा को प्रभु से जोड़ने तक के कार्यो के लिये ही उपलब्ध करवाई जाती है । लेकिन जब ये मकसद ही अधूरा साबित होने लगता है अर्थात "उपलब्ध विशेष ताकत" स्वंय को परमात्मा स्थापित करने तथा अपनी ही कब्र विशेष का ध्यान करवाने तथा कब्रिस्तानों को खरीदने इत्यादि-नाचने कूदने ताली पीटने भोजन आदि प्रेत घरों विशेषों के प्रबन्धों पर ही खर्च की जाने लगती है "नशे विशेष में" तो फिर जैसे धीरे-2 ये पूंजी विशेष उपलब्ध हुई थी वैसे ही धीरे-2 मकसद से दूर होने के कारण अपने आप स्वाभाविक रूप से आवश्यकता अनुसार यह पूँजी विशेष अवश्य लुप्त भी होने ही लगती है निरन्तर निश्चित रूप से । इसका एक कारण हाजमे का कमजोर होना भी है । इसी का नतीजा मत विशेष धर्म इत्यादि हैं । "हाजमें की धनी आत्मायें दुर्लभ" हैं निश्चित रूप से जैसे "नानक कहत पुकार के - गह प्रभ सरनाई ।" "जो हम को परमेश्वर उचरे है - ते सभ नरक कुण्ड में परेअ है ।" अब सोचो ये "दुर्लभ आत्मायें" आप को क्या करने को लिख

कर दे गयी हैं और आप इनके नाम के ढोल-बाजे बजा कर किसे खुश कर रहे हो ? निश्चित रूप से अपने लिये ही केवल अपने स्वंय के हाथों से ही घोर-2 नरकों के द्वार खोल रहे हो और केवल "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" को ही प्रसन्न अथवा मजबूत बनाने में ही निरन्तर अपनी "दुर्लभ हस्ती मनुष्य के जन्म" को खर्च कर रहे हो निश्चित रूप से । केवल यही "शैतानी ताकतें" आप के इन महान-2 धन्धों का विशेष-2 लेखा-जोखा प्रत्यक्ष उपलब्ध करवाने में निरन्तर व्यस्त हैं निश्चित रूप से गाँठ बाँध लो । खोज कर देख लो केवल एक भी आत्मा ऐसी आप को उपलब्ध नहीं मिलेगी जो ये दावा पेश करे कि इस जल विशेष को पीने के बाद उसकी बात बन गई "परम चेतन सत्ता" को प्रत्यक्ष अनुभव कर लेने वाली "विशेष बात" निश्चित रूप से । और न ही ऐसी कोई आत्मा उपलब्ध होगी जो ये कहे कि नानक या गोबिंद आदि मिले ! किसी को सुपने आ रहे हैं तो कोई किसी और अनहोनी कहानियों विशेष में ही डूबा हुआ है निरन्तर, जो केवल "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" का ही एक सूक्ष्म गहरी मार करने वाला "भयानक जाल विशेष" ही है निश्चित रूप से । व्यवहारिक ज्ञान किसी के पास उपलब्ध नहीं है, सभी केवल नाचने-कूदने ढोल बाजे बजाने में ही अपनी "दुर्लभ हस्ती मनुष्य के जन्म" को डुबोने में ही केवल व्यस्त हैं निश्चित रूप से । अब केवल आप ने विचार करना है कि "अमृत" कौन सा है तथा ये "दुर्लभ पूँजी विशेष" कहाँ पर उपलब्ध

है निश्चित रूप से तथा "केवल आप" स्वंय कैसे उस तक पहुँचने में समर्थ हो सकेंगे निश्चित रूप से, "केवल मौत" के आने से पहले ही । कहीं ऐसा न हो कि इस "दुर्लभ अमृत" को चखने से पहले कोई दूसरा अपना "कार्य विशेष" आप से पहले ही कर जाये ! और आप को केवल पछताने के लिये अवश्य मजबूर होना ही पड़ेगा अवश्य आवश्यकता अनुसार निश्चित रूप से । शीघ्र करिये खेल शुरू हो चुका है अर्थात "मौत की घंटी" बजनी शुरू हो गई है, निरन्तर कीमती दुर्लभ आयु मनुष्य के जन्म को "शैतानी ताकतें" हज्म करती चली जा रही हैं और आप केवल ताली पीटने-नाचने कूदने आदि में ही केवल व्यस्त हैं । अब देखना ये है कि कौन सी "दुर्लभ आत्मा विशेष" इन "शैतानी ताकतों" के मुंह पर थूक कर के "अमृत के भण्डार विशेष" को प्रत्यक्ष उपलब्ध करवा कर "सूरमा अथवा बहादुर विशेष" साबित होती है "अकाल पुरख परमात्मा" के "दरबारे खास" धुर विशेष में, और कौन-2 सी आत्मायें विशेष अपने ही हाथों अपने पैरों पर घुंघरू बाँध कर खुश करती हैं केवल "सूक्ष्म अदृश्य शैतानी ताकतों" को तीनों मुल्कों रूपी दरबार विशेष में तरह-2 नाच-2 कर विभिन्न-2 वस्त्रों विशेष को धारण कर अथवा जूनों या पिंजरों विशेष को रोशन करते हुए निश्चित रूप से अनन्त काल तक के लिये ?